सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास में शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की भूमिका का अध्ययन

A Study of Role of Teacher Training Institutions in In-Service Primary Teachers' Professional Development

एम. फिल. (शिक्षाशास्त्र) उपाधि की हेतु प्रस्तुत

लघु शोध–प्रबंध

सत्र:2016-17

शोध निर्देशक
डॉ. शिरीष पाल सिंह
सह प्राध्यापक

शोधार्थी
विद्यासागर कुमार
नामांकन संख्या- **2016/06/218/006**

शिक्षा विद्यापीठ

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

(संसद द्वारा पारित एक अधिनियम -1997 क्रमांक-3 के अंतर्गत स्थापित केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
गाँधी हिल्स, वर्धा-442005 (महाराष्ट्र) भारत

अनुक्रमणिका

विषय वस्तु	पृष्ठ क्रमांक
घोषणा पत्र	
प्रमाण पत्र	
आभार	
अनुक्रमणिका	
अध्याय प्रथम : प्रस्तावना	**1-31**
अध्याय द्वितीय : सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा	**32-43**
अध्याय तृतीय : शोध प्रविधि एवं प्रक्रिया	**44-57**
अध्याय चतुर्थ : प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या	**58-112**
अध्याय पंचम : शोध सारांश, निष्कर्ष, शैक्षिक निहितार्थ एवं सुझाव	**113-124**
संदर्भ-ग्रंथ सूची	**125-130**
परिशिष्ट	

अध्याय- प्रथम

❖ प्रस्तावना

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

मानवीय सभ्यता के प्रारंभ से ही सीखने-सिखाने और सम्प्रेषण के प्रमाण रहे हैं, जिसके उदाहरण आदिम मानवों के द्वारा चित्र उकेरने से लेकर आज की लिखित और औपचारिक शिक्षण प्रणालियों में देखने को मिलता है। रविन्द्र नाथ टैगोर के अनुसार 'भारत की अनेक सामाजिक-आर्थिक सहित ऐसे सभी व्याधियों के लिए बुनियादी शिक्षा के अभाव को ही दोषी मानते थे'। उनका मानना था कि "मेरे विचार में तो भारत की छाती पर जो दुखों की मीनार खड़ी है उसकी जड़ें केवल उपयुक्त शिक्षा के आभाव में जमी हुई हैं। जातीय विभाजन, धार्मिक टकराव, कार्य-विमुखता और शोचनीय आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियाँ, ये सभी इसी एक कारक की देन है "(अमर्त्य सेन, 2005)। इसलिए सभी शैक्षिक समस्याओं के समाधान के लिए अधिक प्रभावशाली शिक्षक शिक्षण और शिक्षकीय कर्म एवं उससे संबंधित कारकों में सुधार के उपाय होते रहे हैं। पूरे विश्व के शिक्षाविद शिक्षक संख्या बढ़ाने पर ही नहीं बल्कि उत्तम प्रकार का ज्ञान, कौशल, सही रुझान व जज्बा और कर्मठ दक्षता की जरुरत महसूस कर रहे हैं। इस गुणवत्तापूर्ण शिक्षक प्रशिक्षण की मांग के परिणामस्वरुप कई नए क्षितिज और आयाम उभर रहे हैं। शिक्षा न केवल व्यक्तिगत बल्कि सामाजिक गुणों को विकसित करने में सक्षम हो रही है, इसके साथ ही यह सामाजिक विवेक का विकास भी करता है। समाज कैसे काम करता है, यह कैसे संरचित होता है और प्रत्येक व्यक्तिगत अभिव्यक्ति और अभिकरण की यह लालसा है कि अपने कार्य के बारे में समुचित जागरूकता विकसित हो (कौर, 2014)। आइंस्टीन ने एक बार कहा था कि बौद्धिक चेतना के समान स्तर पर किसी भी समस्या का हल नहीं किया जा सकता है, जिसे स्वार्थी और आत्मकेंद्रित मानवीय प्रवृति द्वारा निर्मित माना गया है। वर्तमान जरूरतों का तकाजा है कि हमें एक नए तरीके के वैश्विक नजरिये की सीख लेने की जरुरत होगी और इसलिए शिक्षक शिक्षा को नए चिंतन भाव और दूरदर्शी नज़रिए से सीखना होगा। शिक्षक शिक्षा ने अतीत में न केवल समाज के परिवर्तन, संस्कृतिकरण और प्रगति

को शुरू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, बल्कि इस मानवीय लालची प्रकृति को भी कम करने में मदद की है और आज बेहतर भविष्य के निर्माण के लिए नई पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए एक प्रमुख माध्यम माना गया है।

"आज शैक्षिक मूल्य (worth) के उन्नयन को महत्व देना, जीवन की सुन्दरतम पक्ष की पहचान करने के जैसा है" (यशपाल, 2013)। सभी जिस स्थिति में हैं उससे कुछ बेहतर करने की चाह बनी रहती है और हर क्षेत्र में गुणवत्ता सुनिश्चित करने की होड़ सी मची हुई है। शिक्षण की बेहतर स्थिति के द्वारा ही शैक्षिक गुणवत्ता को नई दिशा मिलेगी। बदलते सांस्कृतिक परिवेश में शिक्षण का दायित्व केवल साक्षर बनाना, रोजगार प्रदान करना, सभ्य नागरिक बनाना तक ही सीमित नहीं है, बल्कि शिक्षण का व्यापक दायित्व उस समाज व समुदाय की बौद्धिक संस्कृति, उसकी आर्थिक, सामाजिक, सम्यक व दूरदर्शी राजनीतिक, धार्मिक और प्रखर अध्यात्मिक सम्पन्नता से भी है। इस महती शैक्षिक कर्म के सन्दर्भ में जॉन ड्यूई(डीवी) की नज़र में "क्या पढ़ाया जाय?" की धारणा शैक्षिक कर्म के किसी संशोधन के लिए ऐसे दृढ़ निश्चयों, निर्णयों की आवश्यकता दिखाती है जो विद्यालयों को जीवंत समुदाय में प्रवर्तन के और भी अधिक विचारोत्तेजक केंद्र बनाते हैं। ड्यूई के शैक्षिक लक्ष्य को समझने में एक माकूल सीमा तक सफलता प्राप्त करनी हो तो होना यह चाहिए कि उत्साही, जिंदादिल और दिलचस्प अध्यापक, शिशुओं और किशोरों का अध्यापन करें (स्रोत-शालिनी, 2010)। जॉन ड्यूई का कहना था कि शिक्षक को अभिव्यक्ति के कुछ नये रूपों में पारंगत होना चाहिए। इनमें मौखिक कुशलताओं से लेकर नृत्य संगीत, लेखन आदि समीचीन कलाओं द्वारा यथा रचनात्मक अभिव्यक्ति के और अधिक ठोस व समृद्ध रूप भी आते हैं। वे अध्यापकों को वृत्तिक और उदार व सर्वसुलभ कलाओं और कौशलों के सहारे विकसित होना ही शैक्षिक लक्ष्य के तौर पर देखे। क्योंकि जो लोग ऐसे वैविध्यपूर्ण कला कर्म और अध्यापन दोनों कर सकते है वे ही सबसे अच्छे और प्रभावी ढंग से समृद्धतर और गहन होते बोध का संप्रेषण कर सकते हैं जिसके द्वारा आत्मोन्नति के उच्चतर चरणों की ओर बढ़ा जा सकता है।

शिक्षक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास :

ब्रिटिश काल के अंतर्गत : विलियम कैरे ने 1802 में व्यवस्थित रूप से आधुनिक प्रकार के शिक्षक प्रशिक्षण के लिए सेरामपुर (पश्चिम बंगाल) में 'नार्मल स्कूल' के नाम से 'शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की शुरुआत की। बॉम्बे (मुंबई) के नेटिव एजुकेशन सोसाइटी के द्वारा कुछ प्राथमिक शिक्षकों को प्रशिक्षित कर देश के अन्य भागों में भेजा गया जिससे कि शिक्षा के स्तर को बेहतर किया जा सके। तत्पश्चात थॉमस मुनरो के द्वारा शिक्षा की प्रगति के लिए बेहतर प्रशिक्षण की जरुरत पर जोर दिया गया और 1826 में शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की गई। तत्कालीन शिक्षा नीति में विलियम एडम्स ने प्रत्येक जिले में शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए 'नार्मल स्कूल' खोले जाने का सुझाव दिया, साथ ही प्रशिक्षण काल में प्रशिक्षणार्थियों को रहन-खाने, आने-जाने का खर्च देने तथा उन्हें आर्थिक भार से मुक्त करने की संस्तुति की। 1826 में ही मद्रास(चेन्नई) में सरकारी प्रयास से माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए 'नोर्मल स्कूल' की स्थापना की जाती है। 1854 के वुड डिस्पैच में कहा गया कि बिना बिलम्ब के हरेक प्रांत में शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना होगी। इसी के अनुसार प्रथम बार शिक्षा की दशा सुधारने के लिए आवश्यक है कि अध्यापकों के प्रशिक्षण का उचित प्रबंध किया जाय एवं इस दौरान इन्हें छात्रवृतियां भी दी जाने की अनुशंसा की गई। इसके बाद 1856 में मद्रास में सरकारी नार्मल स्कूल एवं 1862 में बंगाल में नार्मल स्कूल प्रणाली की स्थापना की गयी। 1882 के भारतीय शिक्षा आयोग के अनुशंसा के अनुसार नियमित भारतीय शिक्षक शिक्षा की प्रणाली(इंडियन रेगुलर सिस्टम ऑफ़ टीचर एजुकेशन) का आगाज प्रथम बार हुआ। इसी प्रकार बॉम्बे(मुंबई) में 1847, कलकत्ता(कोलकता) में 1849 और पूना, आगरा, मेरठ और बनारस में 1850 और 1857 के बीच 'नार्मल स्कूल' की स्थापना की गयी। 1913 में सैडलर आयोग ने शिक्षकों को ग्रीष्मकाल में अपने ज्ञान को नवीनीकरण करने के लिए अल्पकालीन सेवारत शिक्षा सुविधा देने की अनुशंसा की। इसके साथ ही अध्यापकों

को प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहन देने का सुझाव दिया जो कि आज भी सेवाकालीन वृत्तिक विकास के लिए प्रासंगिक है।

वर्धा शिक्षा योजना के अंतर्गत बेसिक शिक्षा के उद्देश्यों पर आधारित क्रिया द्वारा शिक्षा, आत्मनिर्भरता, सम्पूर्ण शिक्षा, शिक्षा का जीवन से संबंध, नागरिकता का प्रशिक्षण, अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा, सभी के लिए समान शिक्षा और इन सब के लिए ही अध्यापक और बालक को अधिक स्वतंत्रता का उचित प्रयोग, अध्यापक को स्वयं सोचने और प्रयोग करने के लिए अधिक अवसर देना ही उपयुक्त सेवाकालीन प्रशिक्षण स्वतः प्रदान करने के क्रम में वे अपने विचारों और योजनाओं को क्रियान्वयन करने का चलन होता है। 1938 में गाँधी जी के प्रभाव से बेसिक ट्रेनिंग कॉलेज इलाहाबाद और विद्यामंदिर ट्रेनिंग स्कूल वर्धा की स्थापना की गयी। सार्जेंट रिपोर्ट 1944 ने शिक्षकों के प्रशिक्षण संस्थानों को आवासीय बनाने, प्रशिक्षण संस्थानों के विद्यार्थियों को कोई शुल्क नहीं लेने, सब प्रकार के शिक्षकों के लिए अभिनव कोर्स(रिफ्रेशर कोर्स) की व्यवस्था करने की संस्तुति की जो आज भी प्रासंगिक है। इस प्रकार अंग्रेजी शिक्षा पद्धति के अनुसार शिक्षक प्रशिक्षण में आधुनिकता का प्रसार, लोकतान्त्रिक मूल्यों का प्रसार, आर्थिक और सामाजिक समानता के विचारों के प्रवर्तन द्वारा जागरूकता पैदा की गई। जिससे धार्मिक और सामाजिक सुधार की आधारशिला की शुरुआत हुई। तब जाकर भावात्मक और राष्ट्रीय एकता की निष्ठा का विकास और मानसिक परिधि का विस्तार पश्चिमी सोच के साथ संपर्क से हुआ (अग्रवाल,2007)।

इसी का प्रभाव है कि अब सतत सेवाकालीन वृत्तिक शिक्षा की अवधारणा की तलाश हो रही है जिसका अमेरिका और यूरोप में चार दशक पहले ही आगाज हो चुका है और हम आज सेवाकालीन प्रशिक्षण का एक ढांचागत और संस्थागत रूप देने में भी हिचक रहे हैं। सेवाकालीन शिक्षा की स्थिति यह है कि लार्ड ऑकलैंड(1839) के शिक्षा के निस्यन्दन सिद्धांत का अनुसरण कर रहे हैं जिसका कारण संसाधन का अभाव बताया जा रहा है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग(1952) ने अध्यापकों की वर्तमान मनोस्थिति तथा निराशा को दूर करने और शिक्षा को राष्ट्र निर्माण का वास्तविक साधन बनाने के लिए उनकी सेवा-शर्तों में सुधार किये जाने की जरुरत पर बल दिया। अध्यापकों की विशेष कठिनाईयों का समाधान करने और उनके शिकायतों को सुनने के लिए 'निर्णायक मंडल' की नियुक्ति की जानी चाहिए। सतत सेवाकालीन प्रशिक्षण के लिए तथा विशेष प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए अभिनव पाठ्यक्रम, अल्पकालिक पाठ्यक्रम और कार्यशाला में व्यावहारिक प्रशिक्षण होना चाहिए जो सवैतनिक बनाने तथा प्रशिक्षण संस्थानों में अनुसंधान पर बल देता है। प्रशिक्षण संस्थान के अध्यापकों, विद्यालय के प्रधानाध्यापक एवं विद्यालय निरीक्षकों का समय-समय पर प्रशिक्षण के संबंध में विचार -विमर्श और विचार विनिमय होना चाहिए। इसके साथ ही सेवाकालीन प्रशिक्षण के लिए पूर्ण वेतन सहित अवकाश दिया जाना चाहिए। सामान्यतः शिक्षक विषय-ज्ञान में प्रवीण होते हैं, परन्तु आगे सीखने के लिए अवरोधन के शिकार होते हैं और उनका सीखना वस्तुतः अनुभव पर ही आधारित होता है। इस अनुभव को अनुसंधान से परिपूर्ण करने और एक शिक्षक को सदैव तत्पर (जीवंत शिक्षण) और नवीनतम अध्ययन के साथ शिक्षार्थी की तरह अपडेट रहने की आवश्यकता है (भारत सरकार,1962)।

भारतीय शिक्षा आयोग (1964) ने शिक्षण संस्थाओं के आपसी अलगाव को दूर करने, प्रशिक्षण कार्यक्रमों और प्रशिक्षण संस्थाओं में गुणात्मक सुधार करने, सभी शिक्षकों के सतत वृत्तिक शिक्षण और विकास की समुचित व्यवस्था करने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा उपयुक्त अभिकरणों का निर्माण होना चाहिए। साथ ही, प्रशिक्षण संस्थाओं की सुविधाओं और कार्यक्रमों के विस्तार के अंतर्गत स्कूल शिक्षकों को अध्यापन कार्य करते हुए शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्राप्त करने की सुविधाएँ प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालयों तथा प्रशिक्षण संस्थाओं को विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन करना चाहिए। राष्ट्रीय शैक्षिक शोध और प्रशिक्षण परिषद की स्थापना का उद्देश्य सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा दोनों के मामले में राज्य और केंद्र सरकार सलाह और शोध-विस्तार

के लिए सहायता देता रहा है जो स्कूली शिक्षा के गुणात्मक सुधार के लिए जरुरी था, परन्तु सेवापूर्व शिक्षक शिक्षा ही प्राथमिकता में रहा है सामान्य रूप से क्रियात्मक अनुसन्धान का क्रियान्वयन, अलग प्रशिक्षण विभाग की स्थापना, परन्तु जरूरत के हिसाब से प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रत्येक शिक्षकों तक पहुँच के बाहर ही रहा जिसका परिणाम विद्यालय की गुणवत्ता का निरंतर ह्रास होता गया और क्योंकि सैकड़ों विद्यालय के बंद होने को तैयार या कामचलाऊ हालत में होने का प्रमाण यह है कि अभिभावकों में पसंद में कमी होती गयी इसका डाइट व अन्य संस्थानों के साथ संसाधन के कारण नेटवर्क बनाने की समस्या आई । 'पहले से प्रशिक्षित शिक्षकों और कार्यरत शिक्षकों के लिए अल्पावधि पाठ्यक्रम हमेशा अच्छा परिणाम नहीं देता है' (भारत सरकार 1962) । राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद के प्राइमरी शिक्षा समिति(1975) में वैकल्पिक सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा के रूप में ग्रीष्म-कालीन सह पत्राचार कोर्स की अनुशंसा की । इसी संस्था ने 1976 में कहा कि विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग और विस्तार सेवा विभाग(एक्सटेंशन सर्विस) के द्वारा अधिकतम शिक्षकों के सेवाकालीन शिक्षा तक पहुँच बनाने के लिए जिला स्तर पर शिक्षक केंद्र की स्थापना की जाय जिससे कि सेवाकालीन प्रशिक्षण को बढ़ावा मिले(अरोरा एवं पांडा), (स्रोत-स्वाति,2017) ।

शिक्षकों के राष्ट्रीय आयोग (1985) ने ज्ञान के विस्फोट और संचार क्रांति के दौर में सार्थक और स्पष्ट कार्ययोजना बनाने और इसे प्राथमिकता के तौर पर अपनाने की जरुरत बतायी और किसी भी कार्यक्रम को संसाधन के कारण प्रभावित नहीं होने को चेताया (भारत सरकार,1983-1985) । इसके साथ ही शैक्षिक तकनीकी का पाठ्यक्रम में प्रयोग करने, कार्यक्रमों के मूल्यांकन और अनुवर्तन का सुझाव दिया गया । 'स्कूल काम्प्लेक्स' कार्यक्रमों की कार्यक्षमता में अभिवृद्धि के लिए प्रशासन का सम्पूर्ण सहयोग, प्रधान शिक्षक और अध्यापक के द्वारा विस्तृत कार्ययोजना बनाने, समुदाय से सहयोग की सूची बनाने को मुख्य प्राथमिकता के तौर पर देखा । इस रिपोर्ट के अनुसार विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण प्रणाली सुझाई गई । संस्थानिक सेवाकालीन प्रशिक्षण उनमें से एक है, जिसके अनुसार संस्थान के लिए सभी शिक्षकों के कार्यक्रम आयोजित करना कोई समस्या नहीं है यदि प्रत्येक शिक्षक

की एक बार पहचान हो जाय तो आवश्यकता आधारित पत्राचार पाठ्यक्रम जो नियमित प्रतिपुष्टि के आधार पर पंजीकृत शिक्षक को डिप्लोमा प्रमाण-पत्र इत्यादि का प्रोत्साहन दिया जाय उसमें मल्टी-मीडिया और सभी अत्याधुनिक तकनीक का उपयोग किया जा सकता है (भारत सरकार,1985)। द्वितीय शिक्षा नीति 1986 ने सतत वृत्तिक विकास को प्रमुखता से विस्तृत रूप से चर्चा की और कहा कि सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा अभिन्न अंग के रूप में हैं। जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान (डी.आई.ई.टी.) की स्थापना का उद्देश्य भी प्राथमिक शिक्षकों के सेवाकालीन और सेवापूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना था। माध्यमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान को उन्नयन कर राज्य शैक्षिक शोध एवं प्रशिक्षण परिषद(एस. सी.ई.आर.टी.)के संपूरक कार्य करने के साथ ही राष्ट्रीय शैक्षिक शोध और प्रशिक्षण परिषद(एन.सी.ई.आर.टी.) को प्रशिक्षण कार्यक्रमों की पाठ्यचर्या और प्रविधि के लिए स्रोत और निर्देशन करने की जिम्मेवारी लेने का सुझाव दिया(केन्द्रीय मानव-संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार(एम.एच.आर.डी.,1998)। 1992 की नयी शिक्षा नीति की संशोधित कार्य-योजना ने एस.सी.ई.आर.टी. को डी.आई..ई.टी.(डाइट), जिला संशाधन इकाई(केंद्र) और दूसरे प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को संचालित और निरीक्षण की जिम्मेवारी दी गयी। प्रौढ़-साक्षरता के क्षेत्र में सम्पूर्ण साक्षरता के लिए जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की 1993 में एक बड़ी पहल के रूप में शुरुआत की गयी। इसकी मुख्य कार्यनीति में सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा को प्राप्त करना था। इसके साथ ही धारणीयता, समता(इक्विटी), स्थानीय स्वामित्व और संचालन पर ज्यादा जोर देकर पथप्रवर्तक(पाथ-ब्रेकिंग) की धारणा के साथ काम करना भी इसका उद्देश्य रहा था। इसीलिए डी.पी.ई.पी.के तहत 'एक बारगी लघु-कार्यक्रम' की जगह पर पुनः 'सतत प्राथमिक शिक्षक के प्रशिक्षण प्रारूप को अपनाने का प्रावधान था। सर्व-शिक्षा अभियान(एस.एस.ए.) के रूप में सरकार की तरफ से एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया क्योंकि इसके द्वारा पहली बार सेवाकालीन प्रशिक्षण को सांस्थानिक सहयोग मिला और यह कार्यक्रम नियमित होने को अग्रसर हुआ। सेंट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन कमिटी की रिपोर्ट(2005) ने कार्यक्षमता में वृद्धि के लिए सरकार को उपयुक्त

(सूटेबल) सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण प्रदान करने और प्रत्येक शिक्षक को सहयोगी से पारस्परिक अंतःक्रिया का अवसर और नवाचार(इनोवेशन) के प्रति संलग्न करने के लिए जरुर प्रोत्साहित करने का सुझाव दिया किसी भी शैक्षिक सुधार के लिए या इसके किसी भी प्रयास के पीछे सुविचारित और सुव्यवस्थित सेवाकालीन शिक्षक शिक्षण और विद्यालय आधारित शिक्षण प्रमुख माध्यम होता है। सेवाकालीन शिक्षा एक घटना भर नहीं हो सकती, वह एक श्रमसाध्य प्रक्रिया है जो ज्ञान, विकास, और वृहद् दृष्टिकोण, कौशल,प्रवृतियों व व्यवहार में बदलाव पर आधारित होती है – जो कार्यशालाओं व विद्यालयी परिस्थितियों में परस्पर क्रिया(अंतःक्रिया) के माध्यम से दी जा सकती है। इसमें केवल विशेषज्ञों से ज्ञान प्राप्त करने पर ही जोर नहीं रहना चाहिए, बल्कि अनुभवात्मक (experinces) अधिगम को सक्रिय शिक्षार्थियों में बदलना, व्यवहार की सहकर्मी-आधारित समीक्षा भी व्यापक रणनीति का हिस्सा बन सकते हैं। आत्मचिंतन को इस कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अवयव माना जाना चाहिए जिसमें उचित समय-सीमा (प्रशिक्षण आवधि), सन्दर्भ और कार्यक्रम की पद्धतियों की चर्चा हो। लेकिन गुणवत्ता और जीवंत विचार सुनिश्चित करने के लिए अधिक विकेंद्रीकरण व्यवस्था की जरुरत होगी जिसमें प्रशिक्षण की पद्धति साफ-साफ निर्धारित हों। खासकर नयी तकनीकों पर आधारित 'व्यापक(मास) प्रशिक्षण' का भी प्रयोग किया जा सकता है। परन्तु इसके लिए अदम्य साहसिकता, रचनात्मक और ईमानदारी की आवश्यकता होगी जिसमें सेवारत शिक्षकों के सरोकारों को प्रत्यक्ष रूप से संबोधित किया जा सके। इसमें उस गैर-वृत्तिक वातावरण की भी बात हो जिसमें शिक्षक कार्य बिना किसी सहयोग के अलग-थलग कार्य कर रहे होते हैं। (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005)

गुणात्मक अध्यापक शिक्षा का पाठ्यचर्या प्रारूप(1998) हेतु समिति जो राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा जे. एस. राजपूत की अध्यक्षता में स्थापित की गई। इस समिति ने कहा कि सेवाकालीन प्रशिक्षण में राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद द्वारा मुखाभिमुख(फेस टू फेस) संस्थागत मॉडल, सोपान मॉडल, संचार मॉडल आधारित दूरस्थ शिक्षा मॉडल को अपनाने पर बल दिया जाय। सेवाकालीन

कार्यक्रमों की विषयवस्तु विद्यालय विषय, शिक्षण शास्त्र तथा कार्यप्रणाली, उभरते हुए सामयिक मुद्दे तथा अध्यापक की 'नई भूमिका' का निर्धारण ही सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का लक्ष्य होना चाहिए। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम वर्तमान शैक्षिक सन्दर्भ में सार्थक होना चाहिए। निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 में भी विशेष तौर पर बताया गया है कि केंद्र सरकार/राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र/स्थानीय प्राधिकारी के स्वामित्वाधीन और उनके प्रबंधित विद्यालयों में सभी अध्यापकों द्वारा यदि न्यूनतम अर्हताएं नहीं है तो अधिनियम के प्रारंभ से पांच वर्ष तक की अवधि के भीतर ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करने किए लिए पर्याप्त अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराएंगे। (अश्वनी,2010)

सेवारत शिक्षक शिक्षा के प्रतिमान :

जैक्सन ने डिफेक्ट एप्रोच एवं वृद्धि उपागम की चर्चा की। डिफेक्ट एप्रोच में जैक्सन ने शिक्षक एवं उनकी शिक्षा को एक समस्या या कुछ न कुछ कमी, त्रुटि के तरफ इशारा किया है, अभी तक के सभी प्रशिक्षण कार्यक्रम इसी के लिए रहे हैं तथा इसपर सर्वाधिक शोध हो रहे हैं,जबकि वृद्धि उपागम (ग्रोथ एप्रोच) कहती है, सभी शिक्षक एक से नहीं होते हैं एवं हमें उन परिस्थितियों की खोज की जरुरत है जिसके कारण व्यवस्था में समस्याएं रही हैं। गर्ग(2014) ने शिक्षक वृत्तिक विकास के उपागम और अभिविन्यास के कुछ बिंदु गिनाये हैं जो इस प्रकार है :-

- क्राफ्ट / प्रैक्टिकल अभिविन्यास :- इस अभिविन्यास के अंतर्गत करके सीखना(लर्निंग बाय डूइंग) जैसे- इंटर्नशिप, अपरेंटशिप, क्षेत्र अनुभव, आदि आते हैं। संज्ञानात्मक सोच के अंतर्गत अभ्यासगत समुदाय, सिखने के अपरेंटशिप प्रारूप इत्यादि को विशेष महत्व दिया जाता है.

- तकनीकी अभिविन्यास :- इसके अंतर्गत व्यवहारवादी मनोविज्ञान, कौशल विकास की प्रक्रिया , सूक्ष्म शिक्षण, दक्षता आधारित शिक्षक शिक्षा ,सिमुलेशन आदि प्रमुख गतिविधियाँ हैं।

- व्यक्तित्ववादी उपागम :- इसके अंतर्गत कुछ मान्यताओं में, बच्चे के विकास का स्तर के अनुसार, व्यक्ति व निजी विकास महत्वपूर्ण जिसमें स्टैण्डर्ड दक्षता की जरुरत शिक्षण में निजी अर्थ एवं शिक्षण में सीखने का ढंग(स्टाइल) की प्राथमिकता इत्यादि का उल्लेख किया जा सकता है। यह वस्तुतः रूसो के कार्य से भी समानता रखता है।

- अकादमिक अभिविन्यास :- इसके अंतर्गत मानवतावादी, निर्माणवादी सोच, तर्क शक्ति का विकास: जैसे महत्वपूर्ण मानव-मूल्यों की चर्चा की जाती है । इसके अलावे अकादमिक उपागम के अंतर्गत अवलोकन, सह-सम्बन्ध, रेकार्डिंग, वर्गीकरण, बच्चे की बौद्धिकता पर जोर, विषय की संरचना एवं सीखने में संज्ञानात्मक (कोगनिटिव) प्रक्रिया की खोज विधि आदि का उल्लेख किया जाता है।

- सामाजिक पुनर्रचना उपागम :– इस उपागम को हम सामाजिक पुनर्रचना आधारित शिक्षा भी कहते हैं इसके अंतर्गत विविधतापूर्ण (डायनामिक्स) गत्यात्मक, अनिश्चित एवं समस्यापूर्ण (प्रोब्लेमेटिक) तत्वों को शामिल करते हैं। इसके अलावे कुछ अन्य बातें भी विचारणीय है जिनमें ज्ञान एक स्थिर मूल्य नहीं है तथा इसके निश्चित प्रमाण के रूप में देखने की जगह एक तार्किक सोच का परिणाम , सामाजिक राजनीतिक जागरूकता से दक्ष शिक्षक की आवश्यकता है इसके अन्य कारकों में सामाजिक न्याय , समता, समस्या समाधान व समूह गतिकी जैसे मुख्य कौशलों के साथ, समालोचनात्मक सोच को विकसित करता है।

उपर्युक्त उपागम के अलावे इन प्रतिमानों की भी चर्चा आवश्यक है जिनमें **बदलाव प्रतिमान** (Change paradlgm), समस्या समाधान प्रतिमान आदि शामिल हैं । बदलाव प्रतिमान हमारे

शैक्षिक संस्थानों सहित पूरी प्रक्रिया में दिशा को ही बदलने की बात करता है जिसमें संस्कृति, आर्थिक और तकनीकी बदलाव के अनुसार समय-समय पर सुधारों की जरुरत होती रहती है। यही समुदाय की उपयोगिता संस्थानों के लिए बढ़ जाती है। वृतिक विकास के प्रतिमान के रूप में **'समस्या समाधान प्रतिमान'** भी है, जिसमें के सभी के लिए तात्कालिक समस्याओं की पहचान व अपनी जिम्मेदारी का भाव महत्वपूर्ण हो जाता है। आजकल स्व-मूल्यांकन की सोच इसी तरफ इशारा करती है। यानि आन्तरिक गुणवत्ता आश्वासन प्रकोष्ठ (IQAC सेल) की स्थापना की अवधारणा इसी प्रतिमान के अनुरूप है।

शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं का कामकाज फ़िलहाल ऊपर से नीचे की ओर यानि कास्केड मॉडल जैसा संचालित होता है। शिक्षक प्रशिक्षण के वर्तमान ढांचे में डायट (DIET), एक प्रमुख भूमिका निभा सकता है क्योंकि यह एक प्रमुख घटक है और यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ये इस काम के लिहाज से अत्यंत कुसज्जित हैं (सेवारत अध्यापकों के लिए अंतरराष्ट्रीय सम्मलेन 2010)।

सेवाकालीन शिक्षकों के वृत्तिक विकास में परिवर्तनों की दिशा (लिबर्मन व मिलर,2000) के अनुसार इस प्रकार है :-

व्यक्तिवाद	वृत्तिक समुदाय
प्रशिक्षण के दौरान पढ़ाई	प्रशिक्षण में सीखना
तकनीकी कार्य और जानकारी का प्रसार	खोजबीन, अनुसन्धान, निर्माण और शैक्षिक खोज
मशीनी काम	पहलकदमी, स्वायत्तता और नेतृत्व
एक-एक कक्षा तक के प्रति सरोकार	सम्पूर्ण स्कूल से सरोकार
एकबारगी डिग्री	सतत गुणवत्ता विकास और सीखने के लिए शिक्षकों को सहारा

सतत वृत्तिक विकास के संप्रत्यय:

शिक्षण के क्षेत्र में वृत्तिक विकास शिक्षकों के लिए समुन्नत और सशक्तिकरण की सतत प्रक्रिया है जिसका आशय शिक्षकों को और भी सक्षम बनाना जिसमें कि वे अपने वृत्ति में सतत वृद्धि की सीख, और सतत उच्च अधिगम की खोज और शैक्षिक जीवन वृत्ति पर निर्भर कार्य में उत्साहित होकर जिससे कि वे विविध साधनों के द्वारा अपने निपुणता को सहभागी बनाने को स्वतः प्रेरित हो सके (हेमंड,2012)।

वृत्तिक शब्द मूलतः अंग्रेजी के 'प्रोफेशनल' शब्द का अनुवाद है। उस समय(प्राचीन काल) में प्रोफेशनल उसे कहा जाता था जो धार्मिक जीवन की आजीविका की शपथ लेता था। समय के साथ इसका व्यापक अर्थ ग्रहण किया जाने लगा जो धार्मिक कार्य ही नहीं बल्कि कोई रोजगार या कार्य करता था उसे (वृत्तिक)प्रोफेशनल कहा जाने लगा। आज के सन्दर्भ में वृत्तिक(प्रोफेशनल) वह है जो एक विशिष्ट योग्यता रखता है; जैसे- वकील, डॉक्टर या शिक्षक। शिक्षण के क्षेत्र में इसके कुछ एक खास मानक हैं जिसमें व्यक्ति के विशेष गुण की अपेक्षा की जाती है। यह एक खास व्यवहार की ओर इंगित करता है जो विवेकशील, समझ, न्यायपूर्ण का गुण होने और कोई निजी स्वार्थ या हित न हो जो उसके वृत्ति में हस्तक्षेप करता हो। इंग्लैंड में यह विद्यालय के लिए प्रशिक्षण और विकास एजेंसी के द्वारा वृतिक मानक का निर्माण किया गया। इसमें वृत्तिक गुण, वृत्तिक ज्ञान, समझ, और वृत्तिक कौशल की चर्चा करता है।

वृत्तिक विकास में शिक्षक वृत्तिक विकास का ज्ञान परम आवश्यक है। वृत्तिक समुदाय के निर्माण में शिक्षक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के साथ-साथ कक्षा में पारस्परिक सम्प्रेषण की समुचित वृद्धि को ध्यान में रखना अति आवश्यक हो गया है लिथ्वूड (1992) के मतानुसार वृत्तिक विकास के निम्नलिखित बिन्दुओं को समझा जा सकता है जिसके माध्यम से वे विकास को इन्हीं

बिन्दुओं पर केन्द्रित करने पर बल देते हैं (स्रोत -यूनेस्को), दूसरी तरफ लिट्ल (1992) के मतानुसार निम्न बातों पर लक्षित कार्यक्रम ही वृत्तिक विकास है।

1. वृत्ति(कार्य-व्यवसाय) बचाए रखने के कौशल का विकास
2. अपने अनुदेशात्मक (इंस्ट्रक्शनल) कार्य के लचीलापन में विस्तार
3. अनुदेशात्मक (इंस्ट्रक्शनल) निपुणता
4. सहकर्मी की वृतिक वृद्धि
5. नेतृत्व क्षमता व निर्णय क्षमता में भागीदारी (स्रोत –यूनेस्को)

शिक्षण, प्रशिक्षण और विकास में संबंध :- प्रशिक्षण अभ्यास केन्द्रित होता है अर्थात इसमें किसी खास कौशल को करके (डूइंग) उसमें निपुणता हासिल किया जाता है। शिक्षा और शिक्षण ज्ञान या जानकारी(नोइंग) केन्द्रित होती है, जबकि विकास उत्तमोत्तम अथवा पूर्णता को प्राप्त करने की प्रक्रिया पर (बीइंग) (Being) केन्द्रित होता है (ब्रीन,1986)।

शिक्षक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो शिक्षक निर्माण कार्यक्रम में प्रयुक्त होती है। शिक्षक विकास के कार्यक्रम को समुचित उपयुक्त सही कौशल, उचित रवैया और कार्य के दौरान कौशलों और रवैये के विकास को लागू (इम्प्लीमेंट) करने की पर्याप्त समझ या ज्ञान वृत्तिक विकास के जैसी ही एक जीवनभर चलने वाली सतत प्रक्रिया होती है और जो शिक्षण कार्य के प्रति प्रतिबद्धता की मांग करती है। शिक्षक विकास, शिक्षक प्रशिक्षण एवं शिक्षक शिक्षा के भिन्न है जहाँ ये दोनों बाहरी संस्था के द्वारा प्रदान किये जाते है वहीं विकास अपने आप अर्थात स्वयं की भागीदारी में घटित होता है (वाल्लैस, 1991)। 1986 में कार्नेगी टास्कफ़ोर्स का गठन अमेरिका में हुआ जिसके प्रतिवेदन में कहा गया कि शिक्षण एक वृत्तिक कर्म के रूप में वैसा प्रभावकारी प्रक्रिया है जो बेहतर शिक्षार्थी निर्माण करने पर सर्वाधिक बल देता है। 1986 में ही होल्म्स समूह (होल्म्स ग्रुप) के अनुसार विश्वविद्यालयों के विभागाध्यक्षों, शोधार्थियों, शैक्षिक विश्लेषकों, नीति निर्माताओं और शिक्षकों, प्रशिक्षकों के वृत्तिक समूह से यह आग्रह किया गया जिसमें बेहतर जानकारी वाला और कौशलयुक्त वृत्तिक शिक्षण

कार्य-दल(Professlonal Teaching Force) के निर्माण की आवश्यकता पर ध्यान दिया जाय। वृत्तिक विकास उपागम के रूप में वृत्तिक विकास के लिए एक वैसे स्वतः अभ्यासगत समुदाय का विकास करें जिसमें कि सभी शैक्षिक मामले और उसके समाधान के लिए निर्माण कार्य और नये सीख की साझेदारी हेतु सहयोगपूर्ण अन्वेषण, समस्या समाधान और चिंतन में शामिल हों। वेल्स में वृत्तिक मानक शिक्षण और नेतृत्व हेतु वृत्तिक मानक के रूप में एक वर्षीय कार्यक्रम की घोषणा की गयी और अभिमुखीकरण के लिये पांच मानक तय किये जिसमें उच्च मूल्यों, यथा- स्थानीय भाषा और संस्कृति, शिक्षार्थी के अधिकारों, साक्षरता, वृत्तिक शिक्षार्थी, शैक्षिक संस्कृति के व्यवस्थागत भूमिका, वृत्तिक पात्रता जैसे अवयवों का उल्लेख किया, इसमें कहा गया कि वैसे वृत्तिक शिक्षार्थी के रूप में शिक्षक को शामिल किया जाय जो आजीवन विकास, सहयोगपूर्ण मनःस्थिति और नवाचार में सतत भागीदारी के लिए प्रतिबद्ध हों। वृत्तिक पात्रता के अंतर्गत शिक्षकों को विद्यालय के अंग के रूप में वृत्तिक अधिकार रखना एवं धारण करना जिससे कि वे सीखने वाले संस्था के रूप में देखे जाते हैं। शिक्षक को स्थानीय, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय वृत्ति में भागीदारी की स्वायत्तता प्रदान की जाती है और शिक्षार्थी के हित में विद्यालय और उसके शैक्षिक वातावरण के संवर्धन हेतु प्रेरित करने का अधिकार मिलता है।

वृत्तिक कर्म के रूप में शिक्षण कार्य

इंटरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजुकेशन में हॉल(1980) ने वृत्तिक कर्म के लिए कुछ मानदंड की पहचान की जिसमें संवेदनशील और महत्वपूर्ण सामाजिक कार्य, विशिष्ट ज्ञान और कौशल, दुरूह उच्च स्तर का शिक्षण और प्रशिक्षण, वृत्तिक नैतिकता का मानक(कोड), व्यक्तिगत और सामूहिक स्वायत्तता और उच्च प्रतिष्ठान और मूल्यपरक पारिश्रमिक शामिल है। इसे देखते हुए लगता है कि शिक्षण एक विशिष्ट और असाधारण(इमर्जेंट) वृत्ति है और वृत्तिक के मानदंडों को कर्मिक रूप रूप से पूरा करने की अभी प्रक्रिया में है जो सतत परिकल्पना के तरफ इंगित करता है जिसमें वृत्तिक से लेकर वृत्तिक विहीनता (नॉन-प्रोफेशनल्स) जिसके अनुसार यह अर्ध-वृतिक प्रवृत्ति

है (टोरसेन हसन एवं अन्य (1994)। वृत्तिक की कार्यात्मक उपागम मानता है कि "वृत्तिक वैसा कर्म है जिसमें समूह या उसके सदस्यों द्वारा उच्च स्तर का ज्ञान और कौशल जिससे सामाजिक कार्य सिद्ध हो और जिसके केंद्र में समाज के यथासंभव समुन्नत बनाने का प्रयोजन सिद्ध होता हो। इसलिए शिक्षण अभी 'वृत्तिकरण' की प्रक्रिया में है, जिसमें इसका मुख्य सार 'सेवा की गुणवत्ता में सुधार' करना है" (चौहान,2012)।

बदलते परिदृश्य में शिक्षण कार्य में दिन-प्रतिदिन भारी बदलाव के आसार बढ़ते जा रहे हैं। पूर्व समय की तुलना में शिक्षकों को अब सर्वथा भिन्न परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है जिसमें पाठ्यचर्या संबंधित शिक्षकीय स्वायत्तता अब देखने को नहीं मिलती है। वर्तमान समय में कई प्रकार की जिम्मेदारियां बढ़ती जा रही है जिसमें सांगठनिक प्रबंधन कार्य जैसी जवाबदेही के साथ-साथ विभागीय कार्यों की जिस तरह अधिकता बढ़ती जा रही है इससे शिक्षकों की अकादमिक व्यस्तता बढ़ रही है जो अन्य वृत्ति कार्य के जैसा ही वृत्तिक रूप ग्रहण करता जा रहा है। शिक्षकों का जो मूल दायित्व और कार्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है, उसमें कई प्रकार के अतिरिक्त अकादमिक कार्यों; जैसे- इससे शिक्षक शासन के मोहरे, यथा सरकारी बैठकों, अभिलेखीय कार्य(रिकॉर्ड कीपिंग), सहित दूसरे कागजी काम से मुख्य शिक्षकीय कार्य (कक्षा अंतःक्रिया) प्रभावित होते हैं, इसे देखते हुए 'अवृत्तिकरण' की मांग ही वृत्तिक विकास का रूप ले लिया है क्योंकि इसलिए 'अवृत्तिकरण' करना सही माना गया। वहीं दूसरी तरफ वैश्विक स्तर पर शिक्षण वृत्ति के अर्थ में लगातार बदलाव हो रहे हैं जिसमें यह (शिक्षक कर्म) और भी अधिक वृत्तिक कार्य बनते जा रहें है और इसके लिए नए तरह के कौशलों की जरुरत है, जिसमें शिक्षार्थी और दूसरे सभी शैक्षिक हितधारकों के साथ सोद्देश्य संबंध की प्राप्ति अधिक महत्वपूर्ण हो गया है और इसके लिए और भी अधिक गहन ज्ञान और इसमें प्रवीणता और अत्यधिक जटिल निर्णय क्षमता की जरूरत बनती जा रही है। इस सन्दर्भ में 'अवृतिकरण' की तुलना में 'पुनर्वृत्तिकरण' की मांग ज्यादा सामयिक है। इसे नव-वृत्तिकरण के रूप में भी देखा गया। (मकुल्लोच, 2000),

आज सेवारत शिक्षकों के लिए शिक्षक प्रशिक्षण आवश्यक हो गया है जिसके लिए सभी बुद्धिजीवियों को शिक्षा और शैक्षिक कर्म को जीवंत बनाने के लिए प्रगतिशील, विविधतापूर्ण और एक विषय विस्तारक(शिक्षा की सीमाओं का अतिक्रमण) करने की महत्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिए। आज व्यवसायों में नैतिक पतन के कारण इसे विपरीत मानवीय गुण के रूप में भी देखा जाने लगा है, जैसे- एक पत्रकार को वृत्तिक(प्रोफेशनल) होना चाहिए या सामाजिक सरोकार । यहाँ वृत्तिक से तात्पर्य स्वार्थ से और ज्यादा से ज्यादा आर्थिक उपार्जन से हो गया है। जबकि पत्रकार का मानव धर्म एवं गुणधर्म ही है सामाजिक सरोकार क्योंकि यह लोकतंत्र का एक अभिन्न और महत्वपूर्ण अंग है।

शिक्षक शिक्षा में प्रशिक्षण और अनुसंधान के विभिन्न शैक्षिक हितधारकों में समन्वय के स्वस्थ वातावरण को बनाए रखने के लिए देखभाल और साझेदारी बढ़ाने की जरुरत होगी जो सभी सरकारी और निजी संस्थानों, विश्वविद्यालय के मुक्त शिक्षा विभाग, जिसमें विश्वविद्यालयों के तहत शिक्षा महाविद्यालय और उच्च अधययन शिक्षा केंद्र को सेवारत शिक्षा के लिए काम करने की योजना बनाना भी शामिल हैं। सेवारत शिक्षक शिक्षा में गुणवत्ता सुनिश्चित करने में एक आदर्श बदलाव के लिए इसके कार्य-रूप को आकार देने में बिना किसी अनावश्यक उपयोगों को ध्यान में लाये, सही दूरदृष्टि के साथ उत्साहित होकर सभी को सदैव तत्पर होना होगा (चक्रवर्ती,2008)।

सेवाकालीन शिक्षक के वृत्तिक विकास में नाना प्रकार के शिक्षण एवं प्रशिक्षण शामिल होते हैं जिसमें सभी तरह के औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षण के द्वारा सीखने की क्रियाएं घटित होती हैं। जिसके उपरांत शिक्षक विद्यार्थियों को विषयगत रूचि के विकास में और भी अधिक उत्साहपूर्ण रूप से मदद करते हैं। शिक्षण एक व्यावहारिक कार्य है, जो सभी स्तरों पर यथा- प्राथमिक स्तर, उच्च विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय स्तरों पर देखने को मिलता है। शिक्षण वृत्ति को समझने के लिए इसे भारी-भरकम 'सैद्धांतिक' तथ्यों से निकलकर व्यावहारिक रूप से आंकने और देखने की जरुरत है, तब यहाँ यक्ष प्रश्न कि वृत्तिक शिक्षक कैसे बनें ? सेवापूर्व और सेवाकालीन सभी तरह की वृत्तिक शिक्षण की योग्यता अपने ढंग से गारंटी नहीं दे सकता है कि जो शिक्षण या प्रशिक्षण सेवा दी

जा रही है वह वृत्तिक धर्म को पूरा ही करता हो। इसलिए शिक्षण वृत्ति एक श्रमसाध्य एवं जटिलतम कार्य लगता है परन्तु यह उतना ही सरल भी है क्योंकि इसमें कई भूमिकाओं की उत्तमोत्तम तरीके से सम्पादित करने की मांग करता है। बस केवल मनोदशा और दूरदर्शिता की बात है कि अपने कर्म क्षेत्र, कक्षा एवं वृहत विद्यालयी समुदाय में आप, हम या कोई किस प्रकार स्वयं को एक सच्चे वृत्तिक उपासक के रूप में स्थापित कर सकते हैं ?

रुथ क्लार्क(Ruth Clark)(2018) प्रभावशाली वृत्तिक विकास के व्यावहारिक सूत्र की चर्चा करते हैं, जिनमें सर्वप्रथम हमें अपने सेवार्थी के विश्वास को प्रेरित करना पड़ेगा। वेशभूषा से भी शिक्षक का सामान्य मर्यादित वृत्तिक पहनावा अपनाया जाय जिससे की सादगी एवं आदर्श व्यक्तित्व की झलक, अनुकरणीय प्रतीत हो। इसके साथ समयपालन को पहली प्राथमिकता दी जाय एवं इसकी आदत हो , इसके लिए हमेशा निर्धारित समय से लगभग 10 मिनट पहले पहुँचते हैं। हमेशा तैयारी के साथ यानि पहले से तैयार होकर रहने का प्रयास करते हैं , अपने पाठ या डायरी को पूर्व रात्रि में देखकर रखते है और एक दिन पूर्व योजना बनाते हैं क्योंकि एक वृत्तिक शिक्षक प्रत्येक पथ को सम्पूर्ण रूप से योजना भी बनाते हैं। साथ ही ये वृत्तिक शिक्षक अपने कार्य के कार्यक्रम तथा मूल्यांकन, समयपालन के प्रति कटिबद्ध रहते हैं कि केवल पाठ्यक्रम, विषय-वस्तु ही पूरा करना लक्ष्य न हो बल्कि उस विषय या सीखने का क्षेत्र(लर्निंग एरिया) में शिक्षार्थियों के दीर्घकालिक सफलता के लिए आवश्यक कौशलों का भी विकास स्वतः करते हैं । विद्यालय के नियमों, आदर्शों(प्रोटोकॉल) का दृढ़ता से पालन करें, वृत्तिक धर्म को अंगीकार करते हैं और जो सेवार्थी के लिए प्रारूप हो उसे स्वीकार करते हैं जिससे शिक्षक के रूप में शिक्षार्थी के लिए उपयुक्त वातावरण बनाते हैं। अपनी कक्षा की जिम्मेवारी लेकर एवं अपने विद्यार्थियों के आचरण, व्यवहार को पथप्रदर्शन, समायोजन करते है। उदाहरणस्वरुप – कक्षानुशासन के लिए हमेशा प्रबंधन की सहायता की आस नहीं होती हैं। शिक्षण प्रक्रिया और उत्पाद(प्रोडक्ट) में गौरवान्वित महसूस करते हैं एवं यह सुनिश्चित करते है कि सभी नोट्स एवं सामग्री वृत्तिक रूप से परिष्कृत है। वृत्तिक शिक्षक को किसी

कार्य को दुबारा सुधारने की संभावना नकारते हैं। अपनी समय सीमा को कभी न भूलें क्योंकि वृत्तिक शिक्षक अपने कार्य को हमेशा अद्यतन एवं कार्य की पूर्व योजना में सटीक रहते हैं । इसमें ऐसे अनुभवहीनता के लिए जगह नहीं होती अपने अंत समय में कुछ और कार्य शेष छोड़ने की आदत रखता हो। विद्यार्थियों के कार्यों(टास्क) को बनाने और उनके ग्रेडिंग के यथासंभव अद्यतन रहना होता है क्योंकि पूर्व-कक्षा के एक लंबे अन्तराल पर जाँच व मूल्यांकन कार्य परिणाम इत्यादि अरुचि का कारण बन सकता है। अपने सहकर्मियों और पर्यवेक्षकों का उचित सम्मान करते हैं जिससे कि खुद शिक्षक के लिए आसान व्यवहार का प्रदर्शन होता है। अपने काम के प्रति तल्लीन(पैशनेट), सकारात्मक, उत्साही,बने रहते हैं। कार्यालय कक्ष(स्टाफ रूम) में कभी नकारात्मक स्थिति का निर्माण या अबौद्धिक गपशप या वार्तालाप और असंतोष के प्रसार से बचते हैं । हमेशा उचित परिवर्तन को स्वीकाते हैं । नये सकारात्मक बदलाव के किसी विचार(आइडिया), सुझावों को हतोत्साहित नहीं करते हैं। एक वृत्तिक शिक्षक किसी नकारात्मक सोच को कभी बढ़ावा नहीं देता; जैसे कि ' किसी का यह नवीन और उपयोगी सुझाव या कार्य इस विद्यालय के लिए उपयुक्त नहीं'। प्रत्येक विद्यार्थियों में पर्याप्त रूचि लेते हैं क्योंकि जितना ही हम अपने शिक्षार्थियों को समझते हैं उतना ही हमारा रवैया उनके जीवन और विषय-वस्तु के प्रति असरकारक होता है। एक कहावत भी है "शिक्षक शाश्वत स्पर्श करता है" इसका असर कितना दूरगामी होगा एक शिक्षक कभी नहीं समझ सकता है । विद्यार्थियों को उचित सम्मान देते है। 'अन्य के लिए करों' की कहावत का पालन करते हैं । शिक्षार्थी को कभी भी सार्वजनिक रूप से अनादर नहीं करते न ही कभी अन्य के सामने परिणामों या ग्रेड की चर्चा करते हैं। एक वृत्तिक शिक्षक दोस्त नहीं बल्कि सलाहकार और परामर्शी सह संरक्षक(मेंटर) होता है । एक आदर्श शिक्षक शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि के बारे में गोपनीयता बनाये रखता है। शिक्षार्थी के अवांछित व्यवहार, उनके नकारात्मक विचार कभी सार्वजानिक रूप से नहीं बताते हैं। हाँ यदि आवश्यक हो तो अभिभावक और अन्य हितधारकों से जरुर परामर्श लेता है। शिक्षार्थी की जीविका की सुरक्षा देते हैं , संस्थान और समुदाय के लिए सेवा भाव के साथ शिक्षण सामग्री इत्यादि सभी

क्रियाकलाप और सभी संसाधनों की उर्जा का यथोचित प्रयोग करते हैं। सहकर्मियों, विद्यालय प्रबंधन को हमेशा ही सहायता, विचार, सीख, लक्ष्य, दूरदर्शिता का साझेदारी करते हैं जो नई कार्य-संस्कृति की सामूहिकता में वृद्धि करता है।

वृत्तिक विकास की आवश्यकता :

मानव समुदाय को जीवनयापन एवं अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए कुछ आधारभूत जरूरतों की आवश्यकता महसूस होती है। अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने मानवीय आवश्यकताओं को स्थानीय परिस्थितियों;(जैसे- भारतीय, जर्मन, अमेरिकन, फ्रांसिसी, अफ्रीकन) का प्रतिफलन माना है। इतना ही नहीं हमारे भारत में भी हिंदी प्रदेशों के लोगों की जरूरतें नागालैंड जैसे अन्य राज्यों के लोगों से भिन्न होती है। ए.एच. मोस्लो (Maslow) ने तो मनुष्य के सभी कार्यकलापों के लिए आवश्यकता के स्तर की चर्चा की जिसके तहत सभी जीव इसी प्रकार स्तरित (स्तरीय) जरुरतों के आधार पर अपने उद्देश्यों को तय करते हैं और तदनुसार व्यवहार करते हैं। प्रत्येक अनुसन्धान के लिए यही आवश्यकता का कारक शोधार्थी को शोध प्रश्न के निर्माण का आधार प्रदान करता है। शिक्षकों को अपने शिक्षण कार्यों के सर्वोत्तम प्रदर्शन के लिए समय-समय पर कुछ आवश्यक वृत्तिक गुण, वृत्तिक जानकारी, शैक्षिक समझ और वृत्तिक कौशल के साथ ही शिक्षार्थी के सभी आवश्यकताओं को भली भांति समझने की जरुरत होती है। इसके अतिरिक्त भी शिक्षक को स्वयं के समुचित सीखने की संभावनाओं का अन्वेषण करने हेतु आन्तरिक प्रोत्साहन, आत्मपरीक्षण और आत्म गौरव में वृद्धि के लिए सतत सार्थक माहौल बनाने की जरुरत होती है। वर्तमान समय में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 और शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 के लक्ष्यों में कक्षा की बहुविविधता को देखते हुए , शिक्षार्थी- शिक्षक के बीच बढ़ते अविश्वास की भावना, सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों के समुचित संवर्धन, परीक्षा के आकलन के नए तरीके पर अनुसन्धान, वैश्विक वृत्तिक पहल, शिक्षार्थियों के समुचित कौशल विकास, समाज और शिक्षा के संबंध में संवेदनशील रूचि, समकालीन, मुद्दों के साथ सार्थक जुड़ाव इत्यादि के साथ तालमेल के लिए शिक्षण और शिक्षक प्रशिक्षण के कार्यक्रमों,

कक्षा व समुदाय की जरूरतें भी समय की मांग बन चुकी है। 'यद्यपि 1960 के दशक से ही शिक्षकों की वृत्तिक तैयारी को अत्यावश्यक माना गया है, लेकिन इसका जमीनी हालत सोचनीय है' (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा,2005)। इसी में कहा गया है कि वर्तमान शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम शिक्षकों को एक ऐसी व्यवस्था में समायोजित करने के लिए प्रशिक्षण देता है जिसमें शिक्षा के बारे में केवल यह समझा जाता है कि उसमें केवल सूचनाओं का प्रसार होता है। पाठ्यचर्या सुधारों के प्रयासों को शिक्षण-प्रशिक्षण का पर्याप्त समर्थन नहीं मिल पा रहा है (एन.सी.एफ.2005)। इसी पाठ्यचर्या में कहा गया है कि शिक्षक-शिक्षा में ज्ञान, शिक्षा के सन्दर्भ में बहु-अनुशासनिक होता है। दूसरे शब्दों में, शिक्षक प्रशिक्षण में अवधारणात्मक निवेशों को इस प्रकार प्रस्तुत करना चाहिए कि वे शैक्षिक घटनाओं; जैसे- क्रिया, प्रयास, प्रक्रिया, अवधारणा और घटनाओं का वर्णन-विश्लेषण करें। शिक्षक-प्रशिक्षण, शिक्षकों के वृत्तिक विकास और स्कूली गतिविधियों में बदलाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इससे शिक्षक व्यावहारिक कार्यों के माध्यम से अपने अनुभव को पक्का कर आत्मविश्वास अर्जित करते हैं। इससे अन्य शिक्षकों से संपर्क-संवाद के अवसर और प्रेरणा मिलती है तथा वृत्तिक ढंग से कार्य करने और ज्ञान में नयापन लेन में सहायता मिलती है (आर.आई.ई.भोपाल)।

सामुदायिक जीवन का संवर्धन और वृत्तिक विकास :

वृत्तिक विकास के अभाव में शिक्षक को समुदाय के लिए किये गए सेवाकार्य को कभी श्रेय नहीं दिया जाता है। प्रबुद्ध शिक्षक के लिए एक खूबसूरत किंवदंती यहां उद्धृत किया जा सकता है :-

"प्रबुद्ध शिक्षक शिक्षाशास्त्र की नई प्रणाली की योजना बनाते हैं, लेकिन यह प्रबुद्ध शिक्षक है जो युवा को निर्देश और मार्गदर्शन करता है। वह सुप्त आत्मबल जगाता है वह साधारण सिखने वाले को भी उत्सुकतापूर्ण गति और उपयुक्त आकार देता है, उत्सुकता को प्रोत्साहित करता है और अस्थिरता असमंजस को सही दिशा देता है, वह सीखने और शिक्षार्थियों के साथ सभी तरह के विचारों को साझा करने के दरम्यान स्वयं प्रफुल्लित होकर संचारित (ट्रांसमिशन) करने में सक्षम है, क्योंकि

शिक्षार्थी और उनके मस्तिष्क का सबसे अच्छा बौद्धिक भंडार पुस्तकों से प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन ज्ञान का अपनत्व केवल व्यक्तिगत संपर्क द्वारा प्रेषित होता है, इस अज्ञात शिक्षक की तुलना में किसी को भी शासन और किसी पाठ्यचर्या से बेहतर नहीं पाया था" (वैन डाइक, 1927)।

नई शिक्षा नीति 1986 और 1990 की संशोधन समिति ने शिक्षा में समुदाय की भागीदारी और उपयोगिता को ध्यान में लाया गया। पिछले 65 वर्षों में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण केवल सरकारी प्रयास पर ही केन्द्रित रहे और वहीं दूसरी तरफ प्राथमिक सरकारी विद्यालयों की हालत बद से बदतर होती गयी। इसका प्रमाण महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र (2017) में एक साथ 450 के लगभग पाठशालाओं को बंद करने की प्रक्रिया है (महराष्ट्र सरकार)। इस तरह पिछले तीन दशकों से प्रासंगिक, उपयुक्त, और मांग आधारित शिक्षा नीति और वैकल्पिक विधियां एवं तरीके की आवश्यकता हुई (मोहन,दत्त &अंटोनी, 2002)। इस सन्दर्भ में कुछ नये सामान्य प्रचलन की प्रबल संभावना हो सकती है। प्रथम स्तर पर अभिभावकों के बच्चों को विद्यालय भेजने के लिए जागरूकता का निर्माण करना, दूसरे स्तर पर हम अपने विद्यालय को और अधिक माँग को पूरा करने लायक बनायें जिसमें समुदाय के विशिष्ट समृद्ध संसाधन को इस्तेमाल करना सीखें; जैसे- परामर्श मार्गदर्शन समिति, अभिभावक समिति, खेल-कूद समिति इत्यादि। तीसरे स्तर पर नए विद्यालयों का निर्माण करने की छूट इन समुदायों के साझा संस्थाओं को दें। इसमें प्रबंधन तो समुदाय का हो, परन्तु पूर्ण निगरानी सरकारी निगरानी समिति संस्था व समुदाय दोनों का संयुक्त रूप से हो। साथ ही इसे क़ानूनी रूप देकर संस्थागत भी किया जा सकता है (गोविंदा,2003)। समुदाय भागीदारी एक्ट (1961) जिसमें वंचित वर्गों के लिए विद्यालयों एवं सहायता समूहों की स्थापना की चर्चा की गई है। 1984 में मुंबई एवं कर्नाटक में सरकारी अनुदान पर विद्यालय की स्थापना व प्रबंधन शुरू किया गया। इसमें विद्यालय शिक्षा समिति को नियमित प्रगति का आकलन का जिम्मा दिया गया। उदाहरण स्वरुप कर्णाटक के नालिकेली(Nllkall Experience) अभ्यास जिसमें सार्वभौमिक शिक्षा के लिए शिक्षण प्राविधि का विकास किया गया। इसमें शिक्षक प्रशिक्षण की विद्यार्थी केन्द्रित पाठ्यचर्या

समीक्षा, भाषा संवर्धन, गणित शिक्षण की अनूठी पहल एवं अन्य व्यावहारिक उन्नत शिक्षण प्रविधि का अभ्यास किया गया। कर्नाटक के ही चिकमंगलूर में 'विकासना'(1989) नामक संस्था ने बालिका शिक्षा के क्षेत्र में स्थानीय रोजगार प्रशिक्षण का अभ्यास का काम किया। इसमें परीक्षा में निम्नतम और असफल अंक प्राप्त करने वाले बच्चों का भी शिक्षण करने का जिम्मा सफलता पूर्वक निभाया एवं इसके लिए शिक्षक प्रशिक्षण का अभ्यास कराया गया।

एक उदार लोकतान्त्रिक प्रणाली में समुदाय एवं राज्य मिलकर ही सांस्कृतिक अभिवृद्धि को प्रभावी बनाते हैं। जहाँ सरकार द्वारा एकक्षत्र शासन की जगह समुदाय को भी जिम्मेदारी में भागीदार बनाया जाता है। इससे विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया के द्वारा संपोषनीय विकास की पहल की जाती है। राजस्थान का 'लोक जुंबिश' इसका उदाहरण है।

वहीं राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 में स्पष्ट उल्लेख है 'अगर कहीं पाठ्यचर्या में खुलेपन का अवसर मिलता भी है तब भी शिक्षक इतने आत्मविश्वासी नहीं हो पाते कि वे अपनी स्वायत्तता का ऐसे उपयोग करने का प्रयास करें जिससे कि प्रशासन द्वारा भी भिन्न तरह से काम करने के कारण असुविधा महसूस न हो।' इसलिए यह जरुरी है कि उनको विकल्प चुनने में और स्वायत्तता को महसूस करने में पर्याप्त सहयोग दिया जाय।

ग्राम शिक्षा समिति के सदस्य और उनका शिक्षक प्रशिक्षण में योगदान :

विभिन्न तहसीलों के ज्यादातर विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के अनुसार राज्य सरकार द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करते हुए ग्राम शिक्षा समिति के पद भरे जाते हैं। जिनमें ज्यादातर प्राथमिक विद्यालयों के बच्चों के पालक या अभिभावकों में से चुन लिया जाता है, जो विशेष पिछड़ी जाति, जनजाति से हों। ग्राम पंचायत से एक सदस्य, अभिभावकों में से एक महिला प्रतिनिधि को चुन लिया जाता है। वर्धा तहसील के पालोती, देवली तहसील के कोलना गाँव तथा आर्वी तहसील के खरांगना गाँव में ग्राम शिक्षा समिति के सदस्य में महिलाओं की संख्या 50 प्रतिशत से भी ज्यादा है

(थूल,2016) । अन्य तहसीलों के गांवों में ग्राम शिक्षा समिति के सदस्य के रूप में महिला वर्ग का प्रतिनिधित्व सरकार के नियमों के तहत भरा जाता है ।

सभी तहसीलों के चयनित गांवों में ग्राम शिक्षा समिति की सभा हर माह में एक बार होती है । सभा का कोई निश्चित दिन नहीं होता है, ज्यादातर सभा माह के प्रथम सप्ताह या अंतिम सप्ताह में आयोजित की जाती है । देवली तहसील के कोलना, आर्वी तहसील के खरांगना, सेलु तहसील के महाबला तथा वर्धा तहसील के पालोती गाँव में ग्राम शिक्षा समिति की सभा कुछ विशेष दिनों जैसे महापुरुषों की जयंती, शिक्षक दिवस, गणतंत्र दिवस व स्वतंत्रता दिवस दोनों पर या विद्यालय से सम्बन्धित विशेष समस्या पर सभा आयोजित की जाती है । गाँव की प्राथमिक शिक्षा में सर्व शिक्षा अभियान से सकारात्मक बदलाव हुआ है । सर्व शिक्षा अभियान के आगाज से गाँव के सभी बच्चें प्रतिदिन विद्यालयों में जाने लगे हैं । विद्यालय की पक्की इमारत तथा भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता से बच्चों का विद्यालयों में नामांकन बढ़ा है । शिक्षकों की कमी दूर होने से विद्यालय नियमित तथा समय पर खुलकर अध्ययन-अध्यापन होने से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलने लगी है । इसी तरह ग्राम शिक्षा समिति के गठन से शिक्षक-समाज में अच्छा तालमेल बैठा है । समाज के लोग शिक्षकों को विद्यालय तथा शैक्षिक कार्यों में मदद करते है । समिति के सदस्य शिक्षकों को विद्यालय के भौतिक संसाधन खरीदने में रणनीति बनाते हैं । बच्चों के अभिभावक बच्चों की शिक्षा से सम्बन्धित प्रश्नों के बारे में शिक्षकों से वार्तालाप करने विद्यालय आते हैं । समाज के लोग विद्यालयों के विभिन्न उपक्रमों में सहभागिता दर्शातेहैं तथा इसके द्वारा शिक्षक-समाज-अभिभावक संबंध दृढ़ होकर सहयोग, शिक्षा का विकास, आपसी तालमेल के संबंध स्थापित होने में मदद मिली है ।

ग्राम शिक्षा समिति के अन्य सदस्य अध्यक्ष की अनुपस्थिति में शैक्षिक गतिविधियोंमें सहयोग देते हैं । जैसे विद्यालय में जाकर देखरेख करना, शैक्षिक समस्या को सुलझाने के लिए अध्यक्ष को सलाह देना, सब सदस्य विद्यालय की देखरेख तथा निगरानी के लिए आपस में तय कर लेते है कि कौन कब विद्यालय जाएगा । अध्यक्ष किसी कारण से समिति की मासिक सभा में उपस्थित नहीं होते तब

समिति का वरिष्ठ सदस्य ग्राम शिक्षा समिति का अध्यक्ष का पद संभालता है। इस प्रकार से सभी तहसीलों के चयनित गाँवों के ग्राम शिक्षा समिति अध्यक्षों ने ग्राम शिक्षा समिति के अन्य सदस्य शैक्षिक गतिविधियों में इस प्रकार का सहयोग देते हैं।

किसी भी शैक्षिक बदलाव को शैक्षिक प्रक्रियाओं पर सामाजिक सन्दर्भों के प्रभाव की समझ से ही संबंधित है। अधिगम या सीखना उस सामाजिक वातावरण या संदर्भो से बेहद प्रभावित होता है जहाँ से शिक्षार्थी और शिक्षक आते हैं। स्कूल और कक्षा का सामाजिक वातावरण सीखने की प्रक्रिया, यहाँ तक कि पूरी शैक्षिक प्रक्रिया पर असर डालता है। इसको ध्यान में रखते हुए विद्यार्थी की मनोवैज्ञानिक विशिष्टताओं की जगह उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक सन्दर्भों की ओर अधिक बल देने की जरुरत है (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा,2005)।

प्रशिक्षण संस्थानों का वृत्तिक विकास में योगदान :

शिक्षा नीतियों की प्राथमिकताओं को प्राप्त करने के लिए, सरकार ने कुछ विशेष (फ्लैगशिप) योजनाओं की शुरुआत की है जिसमें पहुंच, रणनीति, समता और गुणवत्ता की चिंताओं को दूर करने के लिए रणनीतियों को शामिल करने के माध्यम से उन्हें फिर से जीवंत किया है।

शिक्षक शिक्षा के पुनर्निर्माण और पुनर्गठन कार्यक्रम:

शिक्षक शिक्षा के पुनर्निर्माण और पुनर्गठन के कार्यक्रम (1987) में गैर-संस्थागत प्रशिक्षण कार्यक्रमों के साथ विशिष्ट क्षेत्रों में शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए विशेष कार्यक्रम के द्वारा हस्तक्षेप के माध्यम से शिक्षक प्रशिक्षण के संस्थागत आधार को मजबूत बनाने वाली आधारशिला के साथ शुरू किया गया। इस योजना में सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा के लिए जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की गयी और अन्य प्रशिक्षण कार्य का कार्यान्वयन होता है जिसमें प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को सहायता देने के लिए डाइट , गैर-औपचारिक और प्रौढ़ शिक्षा के प्रशिक्षण के लिए शैक्षिक समर्थन भी शामिल है। सेवापूर्व और सेवाकालीन माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के शिक्षण

के लिए शिक्षक शिक्षा महविद्यालय (सी.टी.ई.) और उच्चतर अध्ययन शिक्षा संस्थान (आई.ए.एस.ई) को स्थापित किया गया था।

इस योजना में राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एस.सी.ई.आर.टी.), ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड सामग्री के उपयोग में शिक्षकों के अभिविन्यास और सीखने का न्यूनतम स्तर (एम.एल.एल.) रणनीति के कार्यान्वयन को प्रबल करने की भी योजना है। बच्चों के आवश्यक शिक्षा अधिकार के नियम के अनुसरण में आयोजित की गई योजना का हाल के सुधार और पुनरुद्धार, संशोधित योजनाओं के मुख्य घटक में राज्य शैक्षिक शोध और प्रशिक्षण परिषद या राज्य शिक्षा संस्थान को मजबूत बनाने और उनका उन्नयन, मौजूदा उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (आई.ए.एस.ई.) को मजबूत बनाने, विश्वविद्यालयों में शिक्षा विभाग का उन्नयन, शिक्षक शिक्षा संस्थान की स्थापना और सुदृढीकरण अल्पसंख्यक और पिछड़े केंद्रित जिलों की पहचान करने, शिक्षकों के पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों के लिए प्रमुख संस्थानों की पहचान और व्यापक निगरानी प्रणाली को स्थापित करने में मौजूदा जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान को मजबूत करने और उनके कार्यक्षेत्र और अन्य प्रभाविता का विस्तार, शिक्षक (प्रखंड शिक्षक शिक्षा संस्थान) की स्थापना करने का लक्ष्य रखा गया।

राष्ट्रीय शैक्षिक शोध और प्रशिक्षण परिषद द्वारा 2012 प्रायोजित एक सर्वे में पाया कि सर्वशिक्षा अभियान की रुपरेखा(2000) के दिशा निर्देशानुसार जो 2011 में पुनः पालन करने की प्रतिबद्धता दुहरायी गयी जिसमें कि प्रत्येक दस माह में प्रत्येक प्राथमिक शिक्षकों का प्रखंड स्तर पर कम से कम 10 दिन का प्रशिक्षण दिया जाना था जिसमें इसका राज्यवार पालन करने में 30% से 70% तक सफलता मिली (इसमें महाराष्ट्र 30% सबसे निम्न स्थान पर रहा)। महाराष्ट्र में प्रत्येक वर्ष में सर्व शिक्षा अभियान के तहत 10 दिन की सतत औपचारिक प्रशिक्षण एवं 10 दिन प्रखंड संसाधन केंद्र पर सतत प्रशिक्षण चलाया गया जो शिक्षकों के प्रशिक्षण आवश्यकता पर आधारित था(यादव, 2012)।

अध्याय- पंचम

❖ शोध सारांश, निष्कर्ष,

शैक्षिक निहितार्थ एवं सुझाव

पंचम अध्याय

शोध सारांश, निष्कर्ष, शैक्षिक निहितार्थ एवं सुझाव:

आज शैक्षिक उन्नयन को महत्व देना, जीवन की सुन्दरतम पक्ष की पहचान करने जैसा है (यशपाल,2013)। सभी मनुष्यों में कुछ बेहतर की चाह बनी रहती है जिस कारण मनुष्यों के अन्दर हर क्षेत्र में गुणवत्ता सुनिश्चित करने की होड़ मची है। शैक्षिक गुणवत्ता के लिए किये गए किसी भी सुधार के प्रयास को शिक्षण की बेहतर स्थिति के द्वारा ही नयी दिशा मिल सकती है। बदलते सांस्कृतिक परिवेश में शिक्षण की भूमिका केवल साक्षर बनाना, रोजगार प्रदान करना तथा सभ्य नागरिक बनाना तक ही सीमित नहीं है बल्कि शिक्षण का व्यापक दायित्व उस समाज व समुदाय की बौद्धिक संस्कृति, उसकी आर्थिक सामाजिक, सम्यक व दूरदर्शी राजनीतिक, धार्मिक और प्रखर आध्यात्मिक सम्पन्नता से भी है। इस महती शैक्षिक कर्म के सन्दर्भ में जॉन ड्युई की नज़र में "क्या पढ़ाया जाय?" की धारणा शिक्षा कर्म के किसी संशोधन के लिए ऐसे दृढ़ निश्चयों, निर्णयों की आवश्यकता दिखाई देती है जो विद्यालयों को जीवंत समुदाय में प्रवर्तन की ओर अधिक उन्मुख विचारोत्तेजक शिक्षण केंद्र बनाने में सहायक हैं । ड्यूई के शैक्षिक लक्ष्य को समझने में एक माकूल सीमा तक सफलता प्राप्त करनी हो तो होना चाहिए कि उत्साही, जिंदादिल और दिलचस्प अध्यापक शिशुओं और किशोरों का अध्यापन करें (स्रोत-शालिनी,2010)। जॉन ड्युई का कहना था कि शिक्षक को अभिव्यक्ति के कुछ नये रूपों में पारंगत होना चाहिए। इनमें मौखिक कुशलताओं से लेकर नृत्य संगीत, लेखन आदि समीचीन कलाओं द्वारा यथा रचनात्मक अभिव्यक्ति के और अधिक ठोस व समृद्ध रूप भी आते हैं। वे अध्यापकों को वृत्तिक, उदार, सर्वसुलभ कलाओं और कौशलों के सहारे विकसित होने को ही शैक्षिक लक्ष्य के तौर पर देखे। कारण कि जो लोग ऐसे वैविध्यपूर्ण कला कर्म और अध्यापन, दोनों कर सकते है वे ही सबसे अच्छे और प्रभावी ढंग से समृद्धतर और गहन होते बोध का संप्रेषण कर सकते हैं जिसके द्वारा आत्मोन्नति के उच्चतर चरणों की ओर बढ़ा जा सकता है।

मनुष्य का स्वभाव हमेशा श्रेष्ठता या बेहतर जीवन स्तर की तलाश में रहा है ; जैसे - रहन - सहन के तरीके, नयी तकनीक का उपयोग, सामाजिक कौशल के बेहतर रूप, सांस्कृतिक और सामाजिक विकास इत्यादि। अब मानवीय संसाधन के निर्माण और उसके समुचित विकास आर्थिक, सांस्कृतिक व सामाजिक विकास की आधारशिला बन चुकी है। उत्कृष्ठ समझ और ज्ञानवान समाज ही आने वाले समय में हमारी राह सुझाएंगे। इन सब को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के वृत्तिक विकास और सेवाकालीन शिक्षा की सही कार्यनीति और विकास हेतु पर्याप्त नीति समय की माँग हो चुकी है। खासकर इन शिक्षकों को कैसे सेवाकालीन प्रशिक्षण दिया जाये ताकि बच्चों व शिक्षकों में सामाजिक कौशल की समुचित विकास व संवर्धन हो सके। इस सामाजिक कौशल से हमारा मतलब है कि मनुष्य को सामाजिक बुद्धिमता के लिए कई तरह के गुणों ; जैसे - सह-भागीदारी (शेयरिंग),और किसी काम की पहल, दूसरों को बातचीत या खेलने के लिए आगाज़ (पहल), साथी के साथ सम्बन्ध, दूसरों को गर्मजोशी से स्वागत करना, दूसरों को सराहना भरे शब्द देना, पारस्परिक सहयोग , दोस्ती की पहल , मनोवेगों से आत्म रक्षा, नेतृत्व व तत्काल निर्णय क्षमता, नियमों का पालन, आलोचना को स्वीकारना, सम्प्रेषण की कला, तर्क कला, गलतियों को तुरंत स्वीकारना, इत्यादि । (डॉ. पी.के साहू,२०१४) । इन कौशलों का महत्व संस्थानों , घरों, कार्यस्थल, खाली आराम का समय एवं अन्य दैनिक जगहों पर सैकड़ों बार आते रहते हैं। आज के शहरीकरण के समय में छोटे बच्चों का सामजिक दायरा सोशल मिडिया एवं नयी तकनीक के अंधाधुंध प्रभाव से दिन-दूनी और रात-चौगुनी होती जा रही है। अब समय आ गया है कि इन सबके लिए कि शिक्षार्थी को 'काल्पनिक सोशल से सामाजिक अलगाव, चिढ़, आक्रोश इत्यादि गिरते मूल्यों की स्थिति में शिक्षकों को ही समर्थ व बहुआयामी प्रतिभा से सम्पन्न करना होगा।

किसी भी शैक्षिक सुधार के लिए या इसके किसी भी प्रयास के पीछे सुविचारित और सुव्यवस्थित सेवाकालीन शिक्षक शिक्षण और विद्यालय आधारित शिक्षण प्रमुख माध्यम होता है। सेवाकालीन शिक्षा एक घटना भर नहीं हो सकती, वह एक श्रमसाध्य प्रक्रिया है जो ज्ञान, विकास, और वृहद्

दृष्टिकोण, कौशल, विभिन्न मानवीय प्रवृतियों व व्यवहार में बदलाव पर आधारित होती है – जो कार्यशालाओं व विद्यालयी परिस्थितियों में परस्पर क्रिया(अंतःक्रिया) के माध्यम से प्रदान की जा सकती है । इसमें केवल विशेषज्ञों से ज्ञान प्राप्त करने पर ही जोर नहीं रहना चाहिए, बल्कि अनुभवात्मक (experinces) अधिगम को सक्रिय शिक्षार्थियों में बदलना, व्यवहार की सहकर्मी-आधारित समीक्षा भी व्यापक रणनीति का हिस्सा बन सकते हैं । आत्मचिंतन को इस कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अवयव माना जाना चाहिए जिसमें उचित समयसीमा (प्रशिक्षण अवधि), सन्दर्भ और कार्यक्रम की पद्धतियों की चर्चा हो । लेकिन गुणवत्ता और जीवंत विचार सुनिश्चित करने के लिए अधिक विकेंद्रीकरण व्यवस्था की जरुरत होगी जिसमें प्रशिक्षण की पद्धति साफ-साफ निर्धारित हों । खासकर नयी तकनीकों पर आधारित 'व्यापक(मास) प्रशिक्षण' का भी प्रयोग किया जा सकता है । परन्तु इसके लिए अदम्य साहसिकता, रचनात्मक और ईमानदारी की आवश्यकता होगी जिसमें सेवारत शिक्षकों के सरोकारों को प्रत्यक्ष रूप से संबोधित किया जा सके । इसमें उस गैर-वृत्तिक वातावरण की भी बात हो जिसमें शिक्षक कार्य बिना किसी सहयोग के अलग-थलग कर रहे हैं । शिक्षकों के वृत्तिक विकास से तात्पर्य इनकी पर्याप्त वृत्तिक समझ जिसमें की अपने ज्ञान को लगातार अपडेट करना, पेशेवर मूल्यों की पहचान व वाहक बनकर ,स्व-अध्ययन, आपने कार्य को प्रतिबिंबित(रिफ्लेक्शन) करना, साथियों से परिचर्या, बच्चों के बदलते व्यवहारों को सतर्कता से निरिक्षण, विद्यार्थियों से समुचित सम्बन्ध व रूचि का विकास, प्रतिदिन अपने विकास में तल्लीन, शिक्षकीय कर्म में प्रतिबद्धता, संवैधानिक नियमों व सामाजिक समझ का उन्नयन, उसे किसी भी हालत में मूल्यों की गिरावट में सावधान रहना, परामर्श व निर्देशन में लगातार तल्लीन रहकर वृत्तिक कार्य में जुड़े रहना ;जैसे- शिक्षण, जाँच, पाठ्यकर्म निर्माण,लेखन रूचि, शिक्षण सामग्री में निपुणता के साथ ही अन्य दार्शनिक मूल्यों की पर्याप्त समझ एवं दूरदर्शिता का गुण, सीखने की ललक निर्माण करने में निपुणता, इत्यादि । (राधामोहन 2013)

समस्या कथन:-

"सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास में शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की भूमिका का अध्ययन"

शोध उद्देश्य:-

1. जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों का अध्ययन करना ।
2. सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास हेतु आवश्यकताओं का अध्ययन करना।
3. शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास में योगदान का अध्ययन करना।
4. सामुदायिक जीवन के संवर्धन में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों के योगदान का अध्ययन करना।
5. शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रमों के प्रभावी आयोजन हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध का महत्व:-

प्रस्तुत शोध प्राथमिक शिक्षकों की सोच व व्यवहार के प्रभावी कारकों; जैसे- समुदाय की भूमिका के सन्दर्भ में तथा शिक्षण संस्थानों की सही कार्यप्रणाली एवं यथासंभव राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद (एन. सी. एफ. टी. ई). की आशाओं की पड़ताल हेतु सभी उचित संभावनाओं की खोज की गई। यह देखने का प्रयास किया गया कि समुदाय एवं सभी शैक्षिक संगठनों के बीच जुड़ाव में संस्थान समुचित रूचि एवं सक्षम प्रणाली का विकास कर पायें हैं या नहीं । अभी सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा पूरे शिक्षण व्यवस्था के साथ ही शिक्षक शिक्षा से परित्यक्त अवस्था में है।

अभी भी सेवाकालीन शिक्षा एक सांगठनिक रूप नहीं ले सका है । शिक्षक प्रशिक्षण संस्था एवं शिक्षकों के प्रशिक्षण की आवश्यकताओं की समझ बनाने के लिए यह शोध जरुरी हो गया है । शिक्षकों में वृत्तिक समझ की समुचित जानकारी का अभाव है । शिक्षा के भागीदारों व शिक्षक के सम्बन्ध में तारतम्यता की कमी है। सामाजिक समुदायों में भी शिक्षक समुदाय को नजरंदाज करने की

प्रवृति बढ़ी है। सरकार व शिक्षाविदों का इस तरफ ध्यान आकृष्ट करने हेतु एक शैक्षिक विकल्प की जरुरत होगी। चूँकि राज्य सरकार शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए वृहत स्तर पर प्रयास करने के बावजूद प्रशिक्षण संस्थानों का विकेंद्रीकरण और प्रखंड संसाधन केन्द्रों और क्लस्टर संसाधन केन्द्रों पर प्रशिक्षण का प्रयास किया जा रहा है, परन्तु शिक्षकों में इसके प्रति (प्रशिक्षण के लिए) पर्याप्त आवेदन नहीं आ पाता है। अभी भी शिक्षा का सार्वभौमिकरण का लक्ष्य सरकारों और नीतिकारों के लिए चुनौती भरा काम है। जमीनी स्तर पर शिक्षक प्रशिक्षण और वृत्तिक विकास की सफलता के लिए आवश्यकताएँ, उनके विभिन्न कार्यक्रमों की विस्तृत विवेचना की। इसके लिए बुनियादी हालात का जायजा लेकर सुझाव की संभावनाओं की कोशिश करनी होगी।

शोध विधि एवं प्रविधि

शोधार्थी ने शिक्षकों के वृत्तिक विकास से संबंधित पहलुओं के विभिन्न आयामों की गुणात्मक अध्ययन के लिए आवश्यकता प्रश्नावली को आधार बनाया। इसके साथ ही गुणात्मक आंकड़ों की सहायता से प्रशिक्षण कार्यक्रमों की उपयोगिता जानने हेतु शिक्षकों का विस्तृत साक्षात्कार एवं अवलोकन किया। जिला शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम के सभा में शिक्षकों के कार्यविधि और रुचियों और सामान्य व्यवहार का अवलोकन व अध्ययन किया।

प्रस्तुत अध्ययन से संबंधित अनेक अध्ययनों का सर्वेक्षण किया गया और पाया गया कि प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सर्वाधिक उपयुक्त एवं उचित विधि के रूप में मिश्रित विधि होगी और परिणाम स्वरूप इसी विधि का उपयोग प्रस्तुत अध्ययन में किया गया है।

प्रतिदर्श :

प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास के लिये शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान ही जिम्मेवार है जोकि केंद्र व राज्य-स्तर के सम्मिलित प्रयास से संचालित किये जाते हैं। ज्ञात हो कि जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान को केंद्र सरकार के द्वारा स्थापित किया गया था जिसे प्राथमिक शिक्षा एवं शिक्षक प्रशिक्षण सहित इसके सभी संभव आयामों को सहायता व विकेंद्रीकरण करने के उद्देश्य से हरेक जिले में स्थापित किया गया था। इस संस्थान की स्थापना ही वृत्तिक विकास के लिये की गयी थी। इसके लिए उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्शन से चयनित विद्यालयों के शिक्षकों से आंकड़ों का संग्रहण किया गया।

प्रतिदर्श के रूप में वर्धा जिले के 18 विद्यालयों का सुविधा के अनुसार उद्देश्यपूर्ण चयन किया गया। इसके साथ ही एक वर्ष में संचालित होने वाले कार्यक्रमों की जानकारी व अवलोकन किया गया।

शोध के निष्कर्ष

1. दत्तकशाला कार्यक्रम के अंतर्गत 50 स्कूलों का चयन किया गया जिनमें नयी तालीम विद्यालय, सेवाग्राम(वर्धा) का सहयोग लिया गया है। वर्धा में कुल 8 तालुकाएं हैं। इन सभी तालुकाओं में से ही इन विद्यालयों का चयन कर नए-नए तरह के कार्यक्रम चलाये जाते हैं और शोध किए जाते हैं। इसी शोध के आधार पर अलग-अलग तरह के कार्यक्रम चलाये जाते हैं और इसमें कुछ शिक्षकों और विद्यार्थियों द्वारा नाट्य-कला, रचनावाद से सम्बंधित कार्यक्रम और इससे सम्बंधित विभिन्न प्रकार के शैक्षणिक साहित्य का निर्माण किया जाता है।
2. शिक्षण विधियों में सुधार हेतु प्रशिक्षण के लिए निम्नतर और निम्न वर्ग में कोई प्रशिक्षण आवश्यकता के मत नहीं पाए गए हैं। सामान्य वर्ग में 12.9 प्रतिशत और उच्च वर्ग में 28.6 प्रतिशत प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सर्वोच्च आवश्यकता 58.6 प्रतिशत है जिससे पता चलता है कि शिक्षण विधि में सर्वाधिक रूचि है।इसी प्रकार अन्य आवश्यकताओं के संबंध मे

भी निम्नतर एवं निम्न प्रशिक्षण आवश्यकताओं के प्रति कम मत पाया जाता है और सर्वोच्च एवं सामान्य मद में महत्तम प्राथमिकता पायी गयी।

3. शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम के अनुवर्तन (फॉलोअप) के साथ संचालन स्थल पर पर्याप्त इंवर्टर की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। नए प्रशिक्षण मॉडल का निर्माण होना चाहिए ऐसा कहने वाले का प्रतिशत 20 है। इससे ये मालूम होता है कि शिक्षक की नज़र में विस्तृत व्यक्तिवृत्त अध्ययन और नए प्रयास ज्यादा कारगर साबित होंगे परन्तु इनके लागू करने की परेशानी को हल करने को ज्यादा जरुरी समझते हैं। बीस प्रतिशत शिक्षकों के अनुसार कोई अंतर नहीं होता बल्कि केवल तात्कालिक प्रभाव पड़ता है। परिवर्तन तो आता है परन्तु बता नहीं सकते हैं। दस प्रतिशत का कहना है कि इससे नए-नए तरीके, बेहतर शिक्षण कला में प्रोत्साहन, अपडेट रहने का अवसर मिलता है। प्रशिक्षण दबाव में एवं बाध्यकारी होने के कारण अरुचिकर होता है परन्तु रूचि लेना पड़ता है। पांच प्रतिशत का कहना है कि शिक्षकों का अधिगम सहज होता है और इसे वर्ष में एक बार जरुर आयोजन होना चाहिए । 20 प्रतिशत का कहना है कि इससे शिक्षण बेहतर होता है परन्तु पाठ्यक्रम का दबाव होने के कारण कोर्स समाप्त नहीं होने का भय बना रहता है। 10 प्रतिशत का कहना है कि ये प्रशिक्षक पर निर्भर करता है कि कितना प्रभावी होगा। 5 प्रतिशत का कहना है कि बदले हुए हालत में सामाजिक बदलाव का समुचित ध्यान रखना पड़ता है। यह प्रश्न भी उनके रूचि और परिवर्तन पर आधारित था और इसपर मिली जुली प्रतिक्रिया मिलना इसका प्रशासनिक नियमपालन तक सीमित होने एवं निजी कारण यानि उनकी खुद की दूरदर्शिता भी कारक होती है।

वातावरण के आधार पर करके सिखाना ज्यादा प्रभावकारी रहेगा। बीस प्रतिशत शिक्षकों का कहना है कि अब शिक्षण ज्ञान-रचनावादी रूप ले चुका है जिससे बच्चे ही ज्ञान का निर्माण का स्रोत होंगे। पंद्रह प्रतिशत के अनुसार कार्यक्रम में जीवन मूल्य-संवर्धन में प्रेरणा मिलती है क्योंकि

वहां पर मूल्य की रचना के आयामों के बारे में बताया जाता है और अपने अनुभव साझा करने का अवसर मिलता है। अठारह प्रतिशत का कहना है कि कार्यक्रम से संविधान के मूल्य और उसकी आदत के निर्माण में सुविधा होती है। यानि इसके असर से सभी वाकिफ नज़र आते हैं। असली चुनौती इसके लागू कराने और प्रशासनिक सहयोग की बात आती है। पंद्रह प्रतिशत के अनुसार कहानी-कला का प्रयोग करके और माता-पिता के आदर का मूल्य बताकर ऐसा करते हैं। दस प्रतिशत के अनुसार सफ़ेद दाग जैसे रोगों के उपचार के लिए डॉक्टर की सलाह आदि के द्वारा मूल्य-शिक्षण कराया जाता है और क्राफ्ट वाले से सम्पर्क करके, कला के एक्सपर्ट को बुलाकर अभ्यास, आर्गेनिक खेती, प्रत्यक्ष शिक्षण जो जीवन में उपयोगी हो बताया जाता है। परामर्श मार्गदर्शक का व्याख्यान, संस्मरण के दिन कार्यक्रम और उचित परामर्श और मार्गदर्शन करके, प्रशिक्षित व्यक्तियों से संपर्क करके, मूल्य शिक्षण किया जाता है।

4. प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास के लिए विद्यार्थियों के अभिभावकों, शिक्षक के परिवार के लोग, व्यापक जनसमुदाय और सभी तरह के शैक्षिक समूहों के सदस्यों को विभिन्न रणनीतियों से संवेदनशीलता पैदा कर देने वाले कार्यक्रम का निर्माण किया जाना होगा जिससे सभी राष्ट्र के लक्ष्य एवं ध्येय को आत्मसात कर सकें। प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए एक सुस्पष्ट नीति बनाने की जरुरत है। अभी वृत्तिक विकास के लिए सेवापूर्व शिक्षक शिक्षा के जैसी नीति का अभाव है, इसलिए एक निश्चित कार्ययोजना के साथ सभी शिक्षकों को बराबर अंतराल पर विभिन्न उपायों यथा- विद्यालय स्तर पर वृत्तिक विकास की परिस्थितियां बनाई जा सकती हैं जिससे सभी शिक्षकों में पुनः उत्साह का निर्माण होता रहे। पर्याप्त संसाधनों का संवर्धन करने के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समूहों को अपने स्तर पर कुछ नए योगदान के लिए तैयार रहने एवं उन संस्थाओं को विभिन्न तरह के प्रोत्साहन देने हेतु एक साझा मंच का मिर्माण करने की पहल होगी तो आधारभूत सुविधाओं का निर्माण होने से शिक्षण और इसके दयनीय स्थिति भी

सुधरेगी इसके साथ प्रतिष्ठित व्यक्तियों से उन्हें कुछ प्रोत्साहन देकर प्रशिक्षण कार्यक्रम से जोड़ सकते हैं।

5. सभी संस्थाओं के बीच सक्षम तंत्र(नेटवर्किंग) का निर्माण हो जिससे कि सभी संस्थान अपने कार्यक्रमों को इस प्रकार सक्षम बनायें ताकि इससे शिक्षकों के गिरते मान-मर्यादा, उनके शिक्षण कला के क्रमशः संवर्धन होने की दिशा में आपसी देखभाल और साझेदारी का गुण इत्यादि का स्वतः निर्माण हो, क्योंकि जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्था इसके बिना हांथी के दांत जैसा दिखता है क्योंकि इसके निर्माण के समय इसे अवकाश विहीन संस्था की कल्पना की गयी थी, परन्तु अन्य संस्थाओं से उस तरह का संपर्क इन संस्थाओं को शायद ही दृष्टिगोचर होता है, यह शोध अनुभव और अवलोकन के आधार पर कहा जा रहा है और विभिन्न आयोगों में भी ऐसा वर्णन है।

शैक्षिक निहितार्थ :

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार 2009 में भी विशेष तौर पर बताया गया है कि केंद्र सरकार/ राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र/ स्थानीय प्राधिकारी के स्वामित्वाधीन और उनके प्रबंधित विद्यालयों में सभी अध्यापकों द्वारा यदि न्यूनतम अर्हताएं नहीं हैं, अधिनियम के प्रारंभ से पांच वर्ष तक की अवधि के भीतर ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करने के लिए पर्याप्त अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराएंगे। साथ ही सभी शैक्षिक सुधार और सांस्कृतिक राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति के लिए शिक्षकों के सतत सेवाकालीन प्रशिक्षण ही आधार का काम करेगा। 'एन.सी.ई.आर.टी. के पचास वर्ष' नामक दस्तावेज में कहा गया है कि सेवापूर्ण प्रशिक्षण की उपादेयता संदिग्ध है क्योंकि संस्थानों के स्तर में काफी असमानता पायी जाती है। सभी शिक्षा आयोगों और शिक्षा समितियों में शिक्षा के उन्नयन और अभिवृद्धि के लिए ऐसे शिक्षक की आशा की गयी जिसमें सक्षम और आत्मविश्वास, 'सेल्फ-स्टीम' (जो अभी ज्यादातर शिक्षकों में गायब नज़र आता है) से परिपूर्ण ही नहीं बल्कि खुद अपनी ही आखों में अपनी क्षमता में विश्वास का अभाव रखते हैं कि मैं राष्ट्र का निर्माण कर सकने में समर्थ हूँ। इतना ही नहीं एक तरफ सभी शैक्षिक भागीदारों, योजनाकारों,

सामाजिक और राजनीतिक नेतृत्व, राय निर्माताओं, व्यापार और औद्योगिक नेतृत्व तो दूसरी तरफ इस शैक्षिक व्यवस्था के लाभार्थी (यहां तक कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एक सपना ही है), तीसरी तरफ खुद शिक्षक के परिवार, परिचित और अन्य सभी तरह के अवसर लेते हैं कि शिक्षक और शिक्षण के मूल्यहीनता(worthlessness), को प्रचारित करने के चलन को रोकने के लिए सतत शिक्षा की निहायत जरुरत हो गयी है, क्योंकि एक पाठ्यक्रम से सभी विद्यार्थियों, समुदायों को कैसे शिक्षण कर सकते हैं? जबकि सेना में सतत शिक्षा और प्रशिक्षण का प्रावधान है। सभी शिक्षकों में अपार क्षमता मौजूद है बस याद दिलाने की जरुरत है। शिक्षकों का सामाजिक सम्मान पाने या दिलाने, शिक्षकों के मुकम्मल सशक्तिकरण करने, शिक्षक के दूसरे वृत्ति की ओर 'पलायन' को रोकने, प्रतिभा को शिक्षण के प्रति आकर्षित करने के लिए सतत वृत्तिक विकास की व्यावहारिक जमीन की तलाश करने हेतु सामुदायिक जीवन के तत्वों की अवधारणा की समझ को बढ़ाने की आवश्यकता है क्योंकि बिना शिक्षक सशक्तिकरण के कोई भी नई शैक्षिक पहल बेमानी साबित होगी। भले ही हम कितनी ही तकनीकी विकास कर लें। बालकों में नैतिक, आध्यात्मिक विकास के लिए शिक्षकों के वृत्तिक विकास ही सभी बौद्धिक प्रतिभा और सामाजिक उन्नति की आधारशिला बनने की उम्मीद की जा सकेगी। समावेशी विकास, शिक्षार्थी और अभिवावकों को परामर्श और मार्गदर्शन देने, उपचारात्मक और निदानात्मक शिक्षण को व्यावहारिक रूप देने में वृत्तिक विकास ही एक उत्तम विकल्प का काम करेगी।

अतः इस शोध से निष्कर्ष निकल कर आता है कि प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास की आवश्यकता को व्यापक संदर्भो में देखने और सभी शैक्षिक उपभोक्ताओं को आशान्वित करने के लिए इस क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा शोध को बढ़ावा देने की जरुरत आ गयी है।

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार 2009 में भी विशेष तौर पर बताया गया है कि केंद्र सरकार/राज्य सरकार/ संघ राज्य क्षेत्र/ स्थानीय प्राधिकारी के स्वामित्वाधीन और उनके प्रबंधित विद्यालयों में सभी अध्यापकों द्वारा यदि न्यूनतम अर्हताएं नहीं हैं, अधिनियम के प्रारंभ से पांच वर्ष

तक की अवधि के भीतर ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करने किए लिए पर्याप्त अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराएंगे। साथ ही सभी शैक्षिक सुधार और सांस्कृतिक राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति के लिए शिक्षकों के सतत सेवाकालीन प्रशिक्षण ही आधार का काम करेगा।

भावी शोध हेतु सुझाव

i. शिक्षक प्रशिक्षकों और संस्थान प्रमुख के अभिवृत्ति का अध्ययन किया जा सकता है।
ii. सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास का नीतिक परिप्रेक्ष्य का अध्ययन किया जा सकता है।
iii. विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक के सन्दर्भ में शिक्षकों के वृत्तिक विकास का अध्ययन किया जा सकता है।
iv. शहरी क्षेत्र और ग्रामीण क्षेत्र के सेवारत शिक्षकों के वृत्तिक विकास का अध्ययन किया जा सकता है।
v. मूल्यांकन प्रक्रिया के सन्दर्भ में सेवारत शिक्षक के वृत्तिक विकास का अध्ययन किया जा सकता है।
vi. वृत्तिक विकास का भारत और विदेश में तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
vii. सेवारत शिक्षकों का वृत्तिक विकास और विभिन्न आयोगों और समिति के रिपोर्ट के संदर्भ में अध्ययन किया जा सकता है।
viii. सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास के शोध का संकलन और समीक्षा की जा सकती है।
ix. सेवारत प्राथमिक शिक्षकों के वृत्तिक विकास में शैक्षिक तकनीक के उपयोग का अध्ययन किया जा सकता है।

x. बालकों के अनिवार्य शिक्षा के अधिनियम 2009 और शिक्षकों के वृत्तिक विकास के सहसंबंध का अध्ययन किया जा सकता है।

xi. कला और विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के वृत्तिक विकास का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।